गाँधी-चिंतन में पर्यावरण चेतना

नवीन कुमार (शोध छात्र)
गांधी एवं शांति अध्ययन विभाग
महात्मा गांधी केंद्रीय विश्वविद्यालय, बिहार

शोध-सार

महात्मा गांधी का पर्यावरण से गहरा संबंध था। उन्होंने अपने जीवन में सादा जीवन और उच्च विचारों की आदतों को अपनाया, जिससे प्राकृतिक संसाधनों का संरक्षण होता था। गांधी जी का मानना था कि प्राकृतिक संसाधनों का अत्यधिक दोहन मानवता के लिए हानिकारक है, और हमें प्रकृति के साथ सामंजस्यपूर्ण जीवन जीने की आवश्यकता है। उनकी "सादा जीवन, उच्च विचार" की अवधारणा ने यह संदेश दिया कि हम अपने जीवन में ऐश्वर्य और भोग विलास से दूर रहकर प्रकृति के साथ संतुलित तरीके से जी सकते हैं। गांधी जी ने "अहिंसा" की नीति को केवल मानवता तक ही सीमित नहीं रखा, बल्कि उन्होंने यह भी माना कि सभी जीवों, पेड़-पौधों और पर्यावरण का सम्मान करना चाहिए।

मुख्य शब्द- प्राकृतिक संसाधन, प्रकृति, पर्यावरण, अहिंसा, सादा जीवन उच्च विचार।

गाँधी-चिंतन में पर्यावरण चेतना

गाँधी का पूरा जीवन व्यक्ति, समाज, मानवता व पर्यावरण के लिए एक विरासत है। इसलिए नहीं कि गांधी ने पर्यावरण पर एक बड़ा ग्रंथ लिखा है या एक बड़े बाँध या उद्योग या नदी स्वच्छ करने के लिए एक बड़ा आन्दोलन खड़ा किया है। बल्कि उनका सम्पूर्ण जीवन एवं क्रिया-कलाप पर्यावरण की दृष्टि से न केवल भारत बल्कि विश्व के के लिए एक मार्गदर्शक का काम कर रहा है।**1**

गाँधी मूलतः आध्यात्मिक व्यक्ति थे और राजनीति उनका कार्यक्षेत्र था, परंतु उनकी प्रतिभा इन्हीं दो खानों में सिमटी हुई नहीं थी। उनका चिंतन व्यापक था और उन्होंने जीवन की समग्रता पर विचार किया है। इसलिये उनकी तीखी आलोचना करने वाले चर्चित दार्शनिक ओशो (रजनीश) भी उनके संबंध में कहते हैं- 'गाँधी एक अर्थ में अनूठे हैं भारत के इतिहास में। भारत के विचारशील व्यक्ति ने कभी भी समाज, राजनीति और जीवन के संबंध में सीधी कोई रूचि नहीं ली है। भारत का महापुरुष सदा से पलायनवादी रहा है। उसने पीठ कर ली है समाज की तरफ। उसने मोक्ष की खोज की है, समाधि की खोज की है, सत्य की खोज की है, लेकिन समाज और इस जीवन का भी कोई मूल्य है, यह उसने कभी स्वीकार नहीं किया

गाँधी पहले हिम्मतवर आदमी थे, जिन्होंने समाज की तरफ से मुंह नहीं मोड़ा। वह समाज के बीच में खड़े रहे जिंदगी के साथ और जिंदगी को उठाने की उन्होंने कोशिश की। यह पहला आदमी था, जो जीवन-विरोधी नहीं था, जिसका जीवन के प्रति स्वीकार का भाव था।' **2**

इस स्वीकार-भाव के कारण ही गाँधी एक शताब्दी पहले उस खतरे के प्रति भी चिंतित हो पाये, जो आने वाले दिनों में भयानक तबाही मचाने वाला था और समस्त प्राणी सहित संपूर्ण धरती को नष्ट कर देने वाला था। यह खतरा पर्यावरण का था। यद्यपि तब यह बहुत स्पष्ट नहीं था और संभवत: इसीलिए गाँधी ने इससे निबटने के संबंध में बहुत स्पष्टता से कुछ नहीं कहा है, परंतु उन्होंने जिस जीवन-पद्धति और समाज-व्यवस्था की वकालत की है, उसमें

@2025 Bihar Shodh Samaagam

इस खतरे से बचने की स्पष्ट हिदायत और व्यावहारिक निर्देश मौजूद हैं। इसी कारण श्री भगवान सिंह लिखते हैं- 'महात्मा गाँधी का चिंतन बहुआयामी है- समग्र जीवन एवं जगत् का दर्शन है। उन्होंने न केवल मनुष्य, बल्कि समस्त जीव-जन्तु, पशु-पक्षी, प्रकृति आदि के बीच मानव-जीवन की समरसता या सामंजस्य स्थापित करनेवाली जीवन-दृष्टि विकसित की थी।' **3** गाँधी की इसी समरस और सामंजस्यपूर्ण जीवन-दृष्टि से आज के पर्यावरण संकट का समाधान संभव हो सकता है।

सादगीपूर्ण जीवन-शैली और पर्यावरण

उपभोक्तावादी जीवन-शैली अपनाने के कारण मनुष्य अधिक से अधिक भौतिक वस्तुओं का उपभोग कर लेना चाहता है। इस क्रम में वह यह नहीं देखता कि कौन-सी वस्तुएं उसके लिए जरूरी हैं और कौन सी नहीं। ऐसा वह उपभोग के मोह में पड़कर करता है। वस्तुतः जो चीजें मनुष्य के लिए जरूरी नहीं हैं, उन चीजों को भी जरूरी बना देना उपभोक्तावाद की विशेषता है। इसी के दुष्चक्र में फंस कर मनुष्य की जरूरतें, जो सीमित होती हैं, असीम बन जाती हैं और उन्हें पूरा करने के लिये वह गैरजरूरी चीजों को प्राप्त करने की अंतहीन दौड़ में पड़ जाता है। इसमें विज्ञापन की भूमिका भी महत्वपूर्ण होती है। विज्ञापन के द्वारा ही निहायत अनावश्यक वस्तुओं का प्रचार करके लोगों को उनके प्रति सम्मोहित किया जाता है और उनमें ऐसी लालसा जगायी जाती है कि वे उन्हें पाने के लिये बेचैन हो जाते हैं, जबकि यदि वे वस्तुएँ उन्हें न मिलें, तब भी उनके जीवन में कोई अभाव नहीं होता। आज यही हो रहा है। विज्ञापन के द्वारा साबून, शैंपू, रंग, खुशबू, तेल, मंजन, कपड़ा, गाड़ी आदि तमाम चीजों के साथ-साथ डिजाइन और स्टाइल का लगातार प्रचार करके लोगों पर ऐसा मनोवैज्ञानिक दबाव डाला जाता है कि वे इन्हीं चीजों को पाना जीवन का यथार्थ समझ लेते हैं। उन्हें यह लगने लगता है कि इन चीजों को पाकर ऐसा बनने-दीखने से ही जीवन आकर्षक व सफल हो सकता है। और ऐसा भी नहीं कि ये चीजें एकबार मिल गई तो सब ठीक हो गया, बल्कि रोज-रोज इनके मॉडल आदि में नयापन लाकर फिर से उन्हें पाने के लिये उकसाया जाता है। इस प्रकार मनुष्य गैर-जरूरी चीजों की अनंत जरूरतों की लालसा में पड़कर उपभोक्तावादी जीवन-शैली का शिकार हो जाता है। अब चूँकि इन तमाम गैरजरूरी चीजों का उत्पादन प्राकृतिक संसाधनों के दोहन से ही संभव हो पाता है और इसमें कई प्रकार का कचरा निकलकर प्रकृति को प्रदूषित भी करता है, इसलिये उपभोक्तावादी जीवन-शैली पर्यावरण संकट का एक अहम कारक है। सामाजिक कार्यकर्ता भारत डोगरा इसे स्वीकारते हुये कहते हैं- 'विलासिता की जीवनशैली अनिवार्य रूप से पर्यावरण के विनाश से जुड़ी हैं।' **4**

इस विलासिता का एक ठोस दार्शनिक आधार है और वह आधार है भौतिकवाद। भौतिकवाद वह दार्शनिक सिद्धान्त है, जो भौतिक सुखों को जीवन का परम लक्ष्य मानता है। इस सिद्धान्त के समर्थक किसी ऐसी आत्मा में विश्वास नहीं करते जो देह से अलग हो। उनके अनुसार आत्मा देह के साथ ही उत्पन्न होने और नष्ट हो जाने वाली वस्तु है। अतः यही एकमात्र जीवन है, जिसमें मनुष्य को ज्यादा-से-ज्यादा सुख उठा लेना है। अनियंत्रित भोगवाद इसी अवधारणा से प्रेरित होता है और मनुष्य अधिक-से-अधिक भौतिक सुख प्राप्त कर लेना अपने जीवन का अंतिम उद्देश्य बना लेता है। आज पूरी दुनिया इसी भौतिकवाद की गिरफ्त में आकर असीम भोग को जीवन का एकमात्र लक्ष्य मान बैठी है और उसकी पूर्ति के लिए पर्यावरण का विनाश कर रही है। **5**

इस विनाश को और भयावह बनाने का काम विद्वानों ने किया है। उसने यंत्रों का निर्माण करके भोग के लिए भौतिक वस्तुओं का भंडार पैदा किया है तथा इनके प्रचार-प्रसार के लिये नये-नये तकनीक विकसित किये हैं। यद्दपि

उसकी खोजों ने मनुष्य की बेहतरी के लिये शिक्षा और स्वास्थ्य के क्षेत्र में कई योगदान दिये हैं, परंतु आनुपातिक तौर पर उसने इस योगदान से अधिक मनुष्यता के नष्ट करने के उपाय पैदा कर दिये हैं। हथियारों के जखीरे से लेकर शोषण और विनाश के आधुनिकतम यंत्र तक सब इसी की देन है। इसी के आधार पर विकास का यह संपूर्ण औद्योगिक ढांचा खड़ा है, जिसमें भौतिक वस्तुओं, जिनके उत्पादन में प्राकृतिक संसाधनों का विनाश और प्रकृति का प्रदूषण दोनों होता है। प्रोफेसर दुर्गादत्त पाण्डेय के अनुसार- 'विज्ञान ने हमें वस्तुवादी बना दिया है। हम प्रकृति को भोग की वस्तु समझने लगे हैं और उसके प्रति हमारी सहज आत्मीयता घटने लगी है।' **6** और अमेरिकी चिंतक थियोडोर रोजेक भी इसी कारण वैज्ञानिक विकास के प्रति अपना विरोध प्रकट करते हैं।

उपभोक्तावादी संस्कृति और पर्यावरण

इसीलिए मनुष्य को स्वयं अपने और अन्य प्राणियों सहित समूची पृथ्वी को बचाये रखने के लिये पर्यावरण को सुरक्षित तथा संतुलित रखने के उपाय तलाशने ही होंगे। इसके लिये उपभोक्तावादी संस्कृति को जन्म देने वाली औद्योगिक विकास की वर्तमान अवधारणा को परिवर्तित करना होगा और इसका सूत्र गाँधी के चिंतन में मिलता है, क्योंकि उन्होंने ही कहा था कि यह धरती हमारी सारी जरूरतों को पूरा कर सकती है, परन्तु हमारी लालच को ब्रह्माण्ड भी पूरा नहीं कर सकता। आज एक शताब्दी बाद गाँधी के इस बात को पर्यावरण सुरक्षा के लिये अनिवार्य मानते हुए सच्चिदानंद सिन्हा कहते हैं- 'आज दुनिया के अधिकांश चिंतक और वैज्ञानिक इस बात की चेतावनी दे रहे हैं कि विकास का वर्तमान रास्ता विनाश की ओर ले जाने वाला है। मौजूदा औद्योगिक ढांचे को चलाने वाले लोग भी प्राकृतिक परिवेश के संरक्षण और पर्यावरण के संतुलन की बात करने लगे हैं, भले ही उनके काम इस भावना के विपरीत पड़ते हों। विचारों में यह परिवर्तन एक नये युग के आगमन का सूचक हैं ..... जिसे हम सुविधा के लिये गाँधी का युग कह सकते हैं।'

'इस युग (गाँधी युग) के साथ अलग तरह की विश्व-दृष्टि जुड़ी है। इसें मनुष्य की नियति प्रकृति पर या वनस्पति जगत् समेत अन्य प्राणियों पर विजय प्राप्त करना नहीं, उनके साथ नये तरह के तालमेल स्थापित करना है। आज पर्यावरण की सुरक्षा, जो अन्य जीवों और वनों की रक्षा से जुड़ी है, मानव प्रजाति के स्वयं जीवित रहने की अनिवार्य शर्त दिखायी देने लगी है। पर्यावरण के संतुलन को बनाये रखने के लिये विकास के लक्ष्य को बिलकुल बदल देना जरूरी दिखायी देता है। **7**

इस बदलाव के लिये एक ऐसी सभ्यता की जरूरती है, जो मात्र भौतिक वस्तुओं को केन्द्र में रखने वाली न हो। अभी की सभ्यता ऐसी नहीं है। अभी की सभ्यता तो केवल बाहरी दुनिया में लिप्त रहती है और दैहिक सुखों को सार्थक समझती है। इसके अनुसार अच्छा खाना, अच्छा पहनना, अच्छे घरों में रहना, यंत्रों का उपयोग करना, हथियारों का संग्रह करना, तेज गति से यात्रा करना, शारीरिक मिहनत न करना आदि सभ्यता की निशानी है। **8**

गाँधी ने इस बात को स्पष्ट चर्चा की है कि पाश्चात्य सभ्यता में भौतिक समृद्धि प्राप्त करने की जो दौड़ है, वह उसके विनाश का कारण है। वहाँ के लोग इस समृद्धि के गुलाम बनते जा रहे हैं और किसी उच्च जीवन के बारे में सोच नहीं पाते। इसलिये वे इस सभ्यता से भिन्न एक ऐसी सभ्यता की बात करते हैं, जिसमें भौतिक वस्तुओं की उतनी ही आवश्यकता होती है, जितनी मनुष्य के शारीरिक और आध्यात्मिक विकास के लिए जरूरी होता है। ऐसी सभ्यता जरूरत से अधिक संग्रह को प्रश्रय नहीं देती।

@2025 Bihar Shodh Samaagam

गाँधी ऐसी सभ्यता की बात इसलिये करते हैं कि सुख और दुख का आधार बाहरी परिस्थितियाँ नहीं होतीं, भीतरी मनःस्थितियाँ होती हैं। इसलिये सुख और दुख वस्तु पर निर्भर नहीं करते, मन पर निर्भर करते हैं। बहुत ऐसे लोग होते हैं जो अमीर होने के बावजूद दुखी रहते हैं और बहुत ऐसे लोग गरीब होने के बावजूद सुखी। ऐसा मन के नियंत्रण के कारण होता है। जिनका मन नियंत्रित होता है, वह गरीब होने के बावजूद सुखी रहते हैं, जबकि जिनका मन नियंत्रित नहीं होता, वह अमीर होने के बावजूद दुखी। इसलिये मूल बात वस्तुओं का संग्रह नहीं, मन का नियंत्रण है। जब तब मन नियंत्रित नहीं होता तब तक समृद्धि का अंबार लगा लेने से भी संतोष नहीं होता। इस संबंध में वे स्पष्ट कहते हैं- .. मनुष्य की वृत्तियाँ चंचल हैं। उसका मन बेकार की दौड़-धूप किया करता है। उसका शरीर जैसे-जैसे ज्यादा दिया जाय, वैसे-वैसे ज्यादा मांगता है। ज्यादा लेकर भी वह सुखी नहीं होता। भोग भोगने से भोग की इच्छा बढ़ती जाती है। इसीलिए हमारे पुरखों ने भोग की हद बांध दी।' **9** यह हद आज भी बांधे जाने की जरूरत है, क्योंकि इस हद के कारण मनुष्य की आवश्यकताएँ सीमित हो जायेंगी और जब आवश्यकतायें सीमित हो जायेंगी, तब चीजों के असीम उत्पादन की जरूरत भी नहीं रह जायेगी। फिर इन चीजों के लिये प्राकृतिक संसाधनों का जो दोहन और विनाश किया जाता है, वह भी नहीं हो पायेगा। इस प्रकार यह स्पष्ट है कि गाँधी जिस सभ्यता के हिमायती हैं, उसमें पर्यावरण सुरक्षा के तत्व मौजूद हैं।

यह तत्व गाँधी के यंत्र-विरोधी चिंतन में भी देखी जा सकती है। यह बात शीशे की तरह साफ है कि इस भौतिकवादी सभ्यता को स्थापित और विकसित करने में यंत्रों का मुख्य योगदान है। यंत्रों के द्वारा ही सागर को मथा जाता है, पहाड़ को तोड़ा जाता है तथा पेड़-पौधे से लेकर पशु-पक्षी तक को निर्ममतापूर्वक मार-काट कर वस्तुओं का असीम उत्पादन किया जाता है और उसके बेतहाशा भोग के नये-नये तरीके विकसित किये जाते हैं। उपभोक्ताओं को सम्मोहित करने के लिए विज्ञापनों को जो सहारा लिया जाता है, उसमें भी यंत्र की भूमिका अहम होती है और यंत्रों के उपयोग से ही प्रकृति को प्रदुषित करने वाले कई प्रकार के विषैले पदार्थ पैदा होते हैं। इस प्रकार यंत्र पर्यावरण-विनाश का एक मुख्य कारक है। गाँधी ने इस कारक की पहचान सौ साल पहले कर ली थी। इसीलिए उन्होंने तभी कहा था- 'यंत्र आज की सभ्यता की मुख्य निशानी है और वह महापाप है, ऐसा मैं तो साफ देख सकता हूँ।...यंत्र तो सांप का ऐसा बिल है, जिसमें एक नहीं, सैकड़ों सांप होते हैं। एक के पीछे दूसरा लगा ही रहता है। जहाँ यंत्र होंगे वहाँ बड़े शहर होंगे। जहाँ बड़े शहर होंगे वहाँ ट्रामगाड़ी और रेलगाड़ी होगी। वहीं बिजली की बत्ती की जरूरत रहती है। यंत्र का गुण तो मुझे एक भी याद नहीं आता, जबकि उसके अवगुणों पर मैं पूरी किताब लिख सकता हूँ।' **10**

@2025 Bihar Shodh Samaagam

संदर्भ सूची :

1. मिश्रा, अनिल दत्ता, 'गांधी और पर्यावरण', रावत पब्लिकेशन, 2012, पृ.- 130
2. भगवान श्री रजनीश; देख कबीरा रोया, रजनीश फाउन्डेशन लिमिटेड, 17, कोरेगां पार्क, पूना - 411001 (महाराष्ट्र); नवम्बर, 1979, पृ.- 8
3. श्री भगवान सिंह; "महात्मा गाँधी के चिंतन में तुलसीदास", 'बहुवचन', महात्मा गाँधी अंतर्राष्ट्रीय हिन्दी विश्वविद्यालय, वर्धा, वर्ष-3, अंक-10, जनवरी-मार्च 2002, पृ.- 113
4. डोगरा, भारत, 'कैसा विकास, किसका विकास', बुक्स फार चेंज, आर 39, साउथ एक्सटेंशन (II), नई दिल्ली-110049; 2001, पृ.-24
5. डॉ. राधाकृष्णन; 'भारतीय दर्शन (प्रथम खंड)', (राजपाल एण्ड सन्ज, कश्मीरी गेट, दिल्ली, 1986, पृ. 227
6. पाण्डेय, दुर्गादत्त, "पर्यावरण-दर्शन", परामर्श (हिन्दी) खंड- 17, अंक-3, जून 1996, दर्शन विभाग, पुणे विश्वविद्यालय, पुणे- 211007, पृ. 252
7. सिन्हा, सच्चिदानंद, वर्तमान विकास की सीमाएँ, पूर्वोक्त पृ. 129-130
8. गांधीजी, हिन्द स्वराज, पूर्वोक्त पृ. 55
9. वही, पृ. 55
10. वही, पृ.-83-85